P: ISSN No. 2231-0045 RNI No. UPBIL/2012/55438 VOL.-III, ISSUE-IV, May-2015
E: ISSN No. 2349-9435 Periodic Research

रघुवंश महाकाव्य के त्रयोदश सर्ग में महाकवि कालिदास का सन्देश

रेखा सिंह
प्रवक्ता,
संस्कृत विभाग,
राजकीय बालिका इण्टर कालेज,
दिबियापुर, औरैया

सारांश

प्राचीन काल से देश एंव समाज को जागृत करने का कार्य कवियों ने किया है। उनकी रचनाओं के माध्यम से जनसामान्य में प्राणों का संचार हुआ है। महाकवि कालिदास जी ने अपनी सर्वश्रेष्ठ कृति रघुवंश महाकाव्य में अपनी वर्णन चातुरी के माध्यम से विविध प्रकार के ज्ञान को आकर्षक ढंग से प्रस्तुत करने के साथ ही साथ भावी दम्पत्तियों को श्रेष्ठ सन्देश दिया है।

मुख्य शब्दः मत्सेतुना, मनसोऽभिलाषः, वातायनलम्बितेन, दर्भाङ.कुरनिर्व्यपेक्षा, विनात्वया, काञ्चनकिङि.कर्णनाम्, तत्वावबोधेन।

पस्तावना

प्रकृति मानव की चिर सहचरी है, मानव अपने सम्पूर्ण जीवन काल में हर समय किसी न किसी तरह से प्रकृति से सम्बद्ध रहता है। अन्ततः मानव प्रकृति में ही लय हो जाता है। यही कारण है कि प्रायः सभी कवियों ने येन–केन प्रकारेण प्रकृति के साथ अपना सम्बन्ध अवश्य स्थापित किया है।

महाकवि, कुलगुरू भुवन भास्कर महाकवि कालिदास के काव्यों में प्रकृति का जैसा वर्णन प्राप्त होता है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। महाकवि कालिदास विशुद्ध भारतीय परम्परा के कवि हैं। उनकी समस्त कृतियों में प्रकृति का रूप सहज रूप में चित्रित हुआ है। महाकवि ने प्रकृति वर्णन के माध्यम से अपने उद्देश्य भी व्यक्त किये हैं। प्रकृति का आश्रय लेकर अपनी उसी बात को अत्यन्त सुन्दर ढंग से कह दिया है जो शायद सीधे–सीधे कहने से उतनी प्रभावकारक न होती। कवि का मन प्रकृति रमणी में इतना अधिक रमा है कि 19 सर्गों के 'रघुवंश' महाकाव्य के त्रयोदश सर्ग के वर्णन में अपना सन्देश प्रकृति वर्णन के माध्यम से ही दिया है।

'रघुवंश' महाकाव्य 19 सर्गों में विभक्त है, जिसमें मनु स लेकर अग्निवर्ण पर्यन्त 31 सूर्यवंशी राजाओं का वर्णन है। जिसमें प्रमुख रूप से दिलीप, रघु, राजा दशरथ एवं श्री राम के चरित्र के सुन्दर ढंग से वर्णित किया गया है।

महाकवि कालिदास का प्रकृति वर्णन के माध्यम से सन्देश

रघुवंश महाकाव्य के त्रयोदश सर्ग में लंका नगरी पर विजय प्राप्त कर वहाँ से सीता, भ्राता लक्ष्मण एवं अपने सखा जनों के साथ अयोध्या नगरी को प्रस्थान करते विष्णु अवतार श्री राम अपनी भार्या सीता से समुद्र के वैभव का वर्णन करते हुए कहते हैं –

वैदेहि! पश्यामलयाद्विभक्तं
मत्सेतुना फेनिलम्बुराशिम्।
छायापथेनेव शरत्प्रसन्न
माकाशमाविष्कृतचारूतारम।।[1]

अर्थात् हे जनक नन्दिनी! मेरे द्वारा निर्मित सेतु से मलयागिरि पर्यन्त दो भागों में विभाजित फेनयुक्त समुद्र को तुम छाया पथ (आकाश गंगा द्वारा) दो भागों में विभाजित शरद ऋतु में स्वच्छ रमणीय मनोहारी नक्षत्रो से युक्त आकाश मण्डल की भांति इस जलधि का अवलोकन करो।

प्रस्तुत श्लोक में 'मत्सेतुना' शब्द से पौराणिक प्रसंग ''समुद्र सेतु का निर्माण भगवान श्री राम ने कराया था'' का पता चलता है। साथ ही ''आकाश में नक्षत्र मण्डलों की एक ऐसी घनी रेखा है।'' जिसके चतुर्दिक सघन तारामण्डल विद्यमान रहते हैं। आकाश के मध्य में विद्यमान यह चौड़ी पट्टी के आकार की आकृति कभी भी स्वच्छ आकाश में देखी जा सकती है जिससे आकाश दो भागों में विभक्त सा प्रतीत हाता है। इसी को छायापथ या आकाशगंगा कहते हैं।

मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम अपनी भार्या सीता से समुद्र के उद्भव के सम्बन्ध में एक पौराणिक आख्यान को प्रस्तुत करते हुए इस प्रकार कहते हैं –

गुरोर्यियक्षोः कपिलेन मेध्ये
रसातलं संक्रमिते तुरंगे।
तदार्थमुर्वीमवदारयद्भिः
पूर्वैः किलायं परिवर्धितो नः।।[2]

अर्थात् यज्ञ करने के इच्छुक राजा सगर के यज्ञ के अश्व को कपिल मुनि द्वारा पाताल में भेजे जाने पर उन अश्व को खोजने के लिए पृथ्वी का उत्खनन करने वाले हमारे (श्रीराम) पूर्वजों (सगर पुत्रों) द्वारा यह समुद्र इतना विस्तृत कर दिया गया यह प्रसिद्ध है।

आगे प्रसिद्ध वैज्ञानिक तथ्य को पौराणिक आख्यान के साथ सूत्रबद्ध कर प्रस्तुत करते हुए महाकवि कालिदास श्रीराम के माध्यम से कहते हैं :–

गर्भं दधत्वकर्मरीचमोऽस्मा
द्विवृद्धिमात्राश्नुवते वसूनि।
अबिन्धनं बह्निमसौ बिभर्ति,
प्रह्लादनं ज्योतिरजयनेन।।[3]

अर्थात् सूर्य की रश्मियाँ इस समुद्र से जल रूपी गर्भ धारण करती ह (अर्थात् समुद्र के जल से उनमें वषा करने का सामर्थ्य उत्पन्न होता है)। इसी समुद्र से विविध प्रकार के रत्न एवं मणियाँ वृद्धि को प्राप्त होती हैं। यह समुद्र जल रूपी ईधन वाले वाडवाग्नि का निवास स्थान है। इसी समुद्र ने संसार को आल्हादित करने वाले चन्द्रमा को उत्पन्न किया है।

प्रस्तुत श्लोक में सूर्य की किरणों द्वारा वाष्पोत्सर्जन की वैज्ञानिक क्रिया एवं समुद्रमंथन के फल स्वरूप चतुर्दश रत्नों की प्राप्ति के तथ्यों को अत्यन्त कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

समुद में लाल मूँगों की प्रवाल भित्ति क विषय में प्रकाश डालते हुए महाकवि कालिदास श्रीराम के मुख से कहलाते हैं –

तवाधरस्पर्धिषु विद्रुमेषु।
पर्यस्ततेतत्सहसोर्मिवेगात्।।
उर्ध्वाङ.कुरप्रोतमुखंकथञ्चित्
क्लेशादपक्रामति शङ्.खयूथम्।।[4]

(हे सीते!) तुम्हारे अधरोष्ठ से समता करन वाले अर्थात् अधरोष्ठ् के सदृश रक्तवर्ण मूँगों के ऊपर अकस्मात तरंगों के आवेग से गिरा हुआ तथा (मूँगामणियों के) ऊपर उठे हुए भाग में विद्ध मुखवाला शंख समूह किसी भी प्रकार अत्यन्त कठिनता से अलग हो पाता है।

समुद्र में प्रवाल भित्तियाँ रहती हैं, उनमें शंख नामक जल जन्तु तरंगों के वेग से गिर जाते हैं। शंख नामक जन्तु का केवल मुंह बाहर रहता है और प्रवाल भित्ति से टकराने के कारण वह रक्तरंजित हो जाता है।

प्रस्तुत श्लोक में महाकवि कालिदास का समुद्र शास्त्र विषयक ज्ञान अति सराहनीय है।

सम्प्रति सभी मानने पर बाध्य हो गये हैं कि पुरातन विज्ञान वर्तमान समय के विज्ञान से कहीं आगे था। प्राचीन काल की उन्नत तकनीकि वाली विमान विद्या का एक उदाहरण दृष्टव्य है –

क्वचित्पथा सञ्चरते सुराणां,
क्वचिद्घनानां पततां क्वच्चि।
यथाविधो मे मनसोऽभिलाषः।
प्रवर्तते पश्य तथा विमानम्।।[5]

अर्थात् हे! जनक नन्दिनी (सीते) यह पुष्पक विमान मेरी अभिलाषा के ही अनुरूप कभी देवमार्ग से, कभी जलद (बादल के) मार्ग से और कभी पंक्षियों के मार्ग से प्रस्थान करता हुआ गतिशील होता है।

उस समय व्यक्ति का मन ही रिमोट का कार्य करता था, ऐसा इस श्लोक के माध्यम से हमें पता चलता है।

आगे भी महाकवि कालिदास कहते हैं –

करेण वातायनलम्बितेन
स्पृष्टस्त्वया चण्डि कुतूहलिन्या।।
आमुञ्चतीवाभरणं द्वितीय –
मुद्भिन्नविद्युद्वलयो घनस्ते।।[6]

ह कोपनवती सीते! जब तुम कौतुकवश अपना हाथ विमान से बाहर निकालकर बादलों का स्पर्श करने लगती हो, तो तुम्हारे मणिबन्ध (कलाई) के चतुर्दिक विद्युत चमक जाती है। उस समय ऐसाप्रतीत होता है मानो वह तुम्हारे हाथ में दूसरा आभूषण (कंगन) पहना रही हो।

प्रस्तुत श्लोक में पुष्पक विमान की रचना का वैशिष्ट्य यहाँ विशेष रूप से विचारणीय है, पुष्पक विमान के वातायन (खिड़की) से सीता जी अपने कर कमलों को निकाल कर बादलों का स्पर्श करने लगती है, किन्तु जिस ऊँचाई पर पुष्पक विमान चल रहा है, वहाँ वातायन का खोलना और उससे हाथ निकालना दुष्कर कार्य इसलिए कहा जायेगा, क्योंकि आज की नवीन तकनीकि, अभियन्त्रण कला के विमानों से हाथ निकालना गम्भीर परिणाम देने वाला है। अतः आज के वैज्ञानिक पुष्पक विमान की अभियान्त्रिक संरचना से कुछ विशेष प्रकार की अभियंत्रिक शिक्षा लेकर तद्गुण सम्पन्न विमान बनाने की शिक्षा ले सकते हैं।

श्री राम सीता को उन–उन स्थलों को दिखा रहे हैं, जहाँ सीता व राम का किसी न किसी प्रकार का कोई सम्बन्ध था। सीता का हरण कर रावण जिस दिशा में गया था राम के पूछने पर लताओं ने दिग्दर्शन कितने मार्मिक ढंग से किया था–

त्वं रक्षसां भीरू यतोऽपनीता,
तं मार्गमेताः कृपया लता मे।
अदर्शयन्वक्त्रमशक्नुवन्त्यः,
शाखाभिरावर्जितपल्लवाभिः।।[7]

हे भयशोले! प्रिये! राक्षसाधिपति रावण के द्वारा तुम जिस मार्ग से ले जायी गयी थी, उस मार्ग को वाणी से असमर्थ इन लताओं ने अपने झुके हुए शाखा रूपी भुजाओं के द्वारा कृपापूर्वक मुझे दिग्दर्शन कराया था।

सुप्रसिद्ध वनस्पति शास्त्री सर जगदीश चन्द्र बसु ने यह सिद्ध किया था कि ''मनुष्यों की तरह वनस्पतियों में श्री जीवन और संचेतना होती है।''

महाकवि कालिदास प्राकृतिक चेतना के प्रस्थान बिन्दु कहे जाते हैं और उन्होंने वृक्षों एवं लताओं में संचेतना की बात बसु जी से कई युग पहले कह दी थी।

सीता हरण श्री राम के जीवन का एक मर्म स्पर्शी प्रसंग है,जो राम सहित सम्पूर्ण जड़–चेतन को हिला देता है। तभी तो महाकवि कालिदास ही नहीं अपितु महाकवि 'तुलसीदास' भी दुःखी राम से यह कहलाने में संकोच नहीं करते कि –

हे खग–मृग हे मधुकर श्रेनी।
तुम देखी सीता मृग नयनी।।[8]

महाकवि कालिदास आगे कहते हैं –

मृगयश्य दुर्भाड्.कुर निर्व्यपेक्षा–
स्तवागतिज्ञं समबोधयनम् माम्।।
व्यापारयन्त्यो दिशि दक्षिणस्या–
मुत्पक्ष्मराजीनि विलोचनानि।।[9]

अर्थात् कुशांकुरों की उपेक्षा करने वाली (अर्थात् सीता हरण के दुःख से विषादग्रस्त हो चरने का कार्य बन्द करने वाली) हरिणियों ने भी ऊपर का उठाये हुए नेत्रों के पलकों को दक्षिण दिशा की ओर प्रवृत्त कर तुम्हारे जाने के मार्ग को न जानने वाले मुझ राम को तुम्हारे गन्तव्य का निर्देश दिया था।

महाकवि कालिदास ने यह स्पष्ट कर दिया है कि राम के साथ मानव, पशु, पक्षी, वनस्पति, पर्वत, जल आदि सबकी संवेदना थी। अर्थात् उनके दुःख से दुःखी थे। इस प्रकार महाकवि ने श्री राम के जीवन की समन्वयवादिता का परिचय दिया है।

वर्षाकाल का आरम्भ विरही जनों के लिए कितना असह्य होता है यह सभी जानते हैं, महाकवि कालिदास राम के माध्यम से कह रहे हैं –

गन्धश्च धाराहतपल्वलानां
कादम्बर्धोद्गतकेसरं च।
स्निग्धाश्च केकाः शिखिनां
बभुव–र्यस्मिन्नसह्यनि विनात्वया मे।।[10]

(माल्यवान पर्वत श्रृंखला पर) मेघमाला की धाराओं के कारण, जलाशयों से उठी हुई सुगन्ध, अर्धविकसित कोशां वाले कदम्ब के पुष्प और मयूरों की मधुर ध्वनि तुम्हारे (सीता) के बिना मुझे असह्य हो गये।

महाकवि कालिदास ने मर्मस्पर्शी भाव राशियों की सुन्दर व्यंजना करके इस श्लोक को अत्यन्त भाव प्रवण बना दिया है।

महाकवि 'तुलसीदास' 'रामचरितमानस' में इन भावों की अभिव्यक्ति इस प्रकार की है –

घन घमण्ड नभ गर्जत घोरा।
प्रिया हीन डरपत मन मोरा।।[11]

वर्षाकाल में सम्पूर्ण प्रकृति का श्रृंगार हो जाता है और सर्वत्र उसका रूप आल्हादित करता है, परन्तु विरही जनों के लिए प्रकृति का श्रृंगारित रूप अत्यन्त दुःखदायी होता है। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि महाकवि 'सूरदास' जी ने भी गोपियों की विरहावस्था को देखकर कहा था –

बिनु गोपाल बैरिन भई कुन्जै,
तब ये लता लगति अति शीतल
अब भई विषम ज्वाल की पुंजै।।[12]

गोदावरी नदी के समीप विद्यमान सारस पंक्तियों का हृदयहारो वर्णन दृष्टव्य है –

अमूर्विमानान्तरलम्बिनीनां
श्रुत्वा स्वनं कांचनकिडि.क्णीनाम्।
प्रत्युद्व्रजन्तीव खमुत्पतन्त्यो
गोदावरीसारस पंक्त्यस्त्वाम्।।[13]

अर्थात् देखो! पुष्पक विमान में यत्र–तत्र लम्बायमान् स्वर्णमयी घंटियों के कोलाहल (ध्वनिशब्द) को सुनकर सारसों की पंक्तियाँ मानो तुम्हारी अगवानी करने के लिए आ रही हैं।

प्रस्तुत श्लोक में हमें महाकवि कालिदास जी के शकन शास्त्रीय ज्ञान का पता चलता है। सामने से सारस पंक्तियों का आना शुभ–शकुन माना जाता है। यहाँ सारस पंक्तियों की विद्यमानता की परिणित अयोध्या में उनके राज्याभिषेक से होती है।

महाकवि कालिदास राम के माध्यम से सीता के प्रकृति प्रेम पर प्रकाश डालना नहीं भूलते। राम सीता से कहते है – हे सीते! तुमने अपनी पतले कटि प्रदेश से घड़ों को ढोकर जिन पुत्र सदृश छोटे–छोटे वृक्षों को पंचवटी में बड़ा किया था उन्हें देखकर मेरा मन आनन्द विभोर हो रहा है।

वन को जाते हुए श्री राम प्रयाग में ऋषि भरद्वाज के आश्रम में – 'कत्रमया वस्तव्यम्'' पूछने के लिए गये थे तो भरद्वाज ऋषि ने– 'चित्रकूटमेव त्वनिन्नवासयोग्यं उचितं स्थानम्' (चित्रकूट ही तुम्हारे निवास योग्य उचित स्थान है) ऐसा कहा था। श्रीराम् ने सीता एवं भ्राता लक्ष्मण सहित चित्रकूट के रमणीय वातावरण में अपना निवास बनाया था। चित्रकूट क सम्मुख आ जाने पर श्री राम चित्रकूट की अमूल्य निधि 'मन्दाकिनी' नदी के विषय में सीता से कहते हैं –

एषा प्रसन्नस्तिमितप्रवाहा।
सरिदविदूरान्तरभावतन्वी।
मन्दाकिनी भाति नगोपकण्ठे
मुक्तावली कण्ठगतेव भूमिः।।[14]

निर्मल और मन्दप्रवाह वाली दूर से क्षीण रूप दिखायी पड़ने वाली यह मन्दाकिनी नदी चित्रकूट पर्वत के समीप बहती हुई पृथ्वी के गले में पडी हुई मुक्तावली (मोती की माला) के समान सुशोभित हो रही है।

ऐसी मान्यता है कि सप्तऋषियों (अत्रि, मरीचि, पुलस्त्य, पुलह, कृतु, अंगिरा और वशिष्ठ) के स्नानार्थ सती अनुसूइया ने चित्रकूटस्थ अपने आश्रम परिसर में जिस नदी को प्रवाहित किया था वही नदी वर्तमान समय में मन्दाकिनी नाम से प्रसिद्ध है। चित्रकूट के बाद प्रयाग में जब पुष्पक विमान पहुंचता है तब प्रयाग महिमा करने को भी महाकवि कालिदास नहीं चूकते और कहते हैं –

समुद्रपत्नयोर्जल सन्नितपाते
पूतात्मनामत्र किलाभिषेकात।
तत्वावबोधेन विनापि भूय
स्तनुत्यजां नास्ति शरीर बन्धः।।[15]

यहाँ (प्रयाग में) समुद्र की पत्नियों (गंगा–यमुना) के संगम स्थल में स्नान करने से पवित्रात्मा वाले पुरूषों को तत्वज्ञान के अभाव में भी शरीर त्याग करने से पुनर्जन्मादि सांसारिक बन्धन नहीं होता है, ऐसा प्रसिद्ध है।

P: ISSN No. 2231-0045 RNI No. UPBIL/2012/55438 VOL.-III, ISSUE-IV, May-2015
E: ISSN No. 2349-9435 Periodic Research

पयाग संगम से 10–12 किलोमीटर पश्चिम की ओर गंगा के तट पर श्रृंगवेरपुर नामक पावन तीर्थ है, जहाँ वनगमन के समय श्रीराम ने अपने राजमुकुट एवं राजसी वेशभूषा त्याग करके जटाबद्ध होकर वन को प्रस्थान किया था। उस स्थल को सीता को दिखाने के पश्चात अयोध्या पहुँचते हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार रघुवंश महाकाव्य के त्रयोदश सर्ग में हम देखते हैं कि महाकवि कालिदास ने प्रकृति के समस्त जड़–चेतन उपादानों का, जो सीता–राम के जीवन से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सम्बद्ध रहे हैं उनका अत्यन्त दुलभ वर्णन किया है। इस वर्णन में उनकी वर्णन चातुरी तो समक्ष आती ही है, साथ ही कई प्रमुख बातें कवि के सन्देश रूप में भी हमारे सामने आती है। प्रकृति मानव से अभिन्न रूप से सम्बद्ध है वह उसके सुख–दुख में बराबर की भागीदार है। महाकवि कालिदास ने अपने इस प्रकृति वर्णन के माध्यम से– भौगालिक, पौराणिक, ऐतिहासिक, वनस्पतिशास्त्रीय, शकुनशास्त्रीय एवं समुद्रशास्त्रीय आदि विविध ज्ञान राशियों को प्रस्तुत किया है। एक सबसे विशिष्ट तत्व जो मुझे उनका वास्तविक सन्देश प्रतीत होता है, वह है– "सीता के साथ अयोध्या वापस आते राम का सामान्य एवं सहज व्यवहार करना, क्योंकि पत्नी के हरण के पश्चात किसी सामान्य पुरूष के लिए यह अत्यन्त कठिन है, परन्तु श्रीराम सीता से अपनी सुखानुभूति कराने वाली स्मृतियों की बात कर उन्हें अपने सच्चे प्रेम से अवगत कराने का प्रयास कर रहे हैं। जिससे सीता, हरण जैसे दुःखदायी प्रसंग को भूलकर उनके साथ पहले जैसी सामान्य हो जाये।"

वर्तमान समय में महाकवि कालिदास का यह सन्देश उन समस्त दम्पत्तियों के लिए एक अमूल्य निधि होगी, जो छोटी से छोटी बात पर पत्नी का अपमान कर बार–बार उसे धिक्कारते एवं उसकी जिम्मेदारी उठाने का दम भरते रहते हैं।

सन्दर्भ सूची

1. रघुवंश महाकाव्य – 13/2 डा0 शिवबालक द्विवेदी
2. रघुवंश महाकाव्य – 13/3 डा0 शिवबालक द्विवेदी
3. 13/4रघुवंश महाकाव्य – डा0 दिनेश प्रसाद तिवारी
4. 13/13रघुवंश महाकाव्य – डा0 दिनेश प्रसाद तिवारी
5. 13/19रघुवंश महाकाव्य – डा0 शिवबालक द्विवेदी
6. 13/21रघुवंश महाकाव्य – डा0 दिनेश प्रसाद तिवारी
7. 13/24रघुवंश महाकाव्य – डा0 दिनेश प्रसाद तिवारी
8. अरण्यकाण्ड– रामचरित मानस– गीता प्रेस, गोरखपुर।
9. 13/25 रघुवंश महाकाव्य – डा0 दिनेश प्रसाद तिवारी
10. 13/27 रघुवंश महाकाव्य – डा0 दिनेश प्रसाद तिवारी
11. किष्किन्धा काण्ड रामचरितमानस गीता प्रेस, गोरखपुर।
12. स्रसागर – सूरदास
13. 13/83 रघुवंश महाकाव्य – डा0 दिनेश प्रसाद तिवारी
14. 13/48 रघुवंश महाकाव्य – डा0 दिनेश प्रसाद तिवारी
15. 13/58 रघुवंश महाकाव्य – डा0 दिनेश प्रसाद तिवारी

.